

## वात्स्यायन का कामसूत्र

### वात्स्यायन के कामसूत्र का हिन्दी अनुवाद संस्कृत श्लोक सहित

वात्स्यायन के कामसूत्र में कुल सात भाग हैं। प्रत्येक भाग कई अध्यायों में बँटे हैं। प्रत्येक अध्याय में कई श्लोक हैं। साहित्यप्रेमियों की सुविधा के लिए पहले संस्कृत श्लोक और उसके नीचे उसका हिन्दी अनुवाद दिया गया है।

महर्षि वात्स्यायन का जन्म बिहार राज्य में हुआ था और प्राचीन भारत के महत्वपूर्ण साहित्यकारों में से एक हैं। महर्षि वात्स्यायन ने कामसूत्र में न केवल दाम्पत्य जीवन का श्रृंगार किया है वरन कला, शिल्पकला एवं साहित्य को भी संपदित किया है। अर्थ के क्षेत्र में जो स्थान कौटिल्य का है, काम के क्षेत्र में वही स्थान महर्षि वात्स्यायन का है। महर्षि वात्स्यायन का कामसूत्र विश्व की प्रथम यौन संहिता है जिसमें यौन प्रेम के मनोशारीरिक सिद्धान्तों तथा प्रयोग की विस्तृत व्याख्या एवं विवेचना की गई है। अधिकृत प्रमाण के अभाव में महर्षि का काल निर्धारण नहीं हो पाया है। परन्तु अनेक विद्वानों तथा शोधकर्ताओं के अनुसार महर्षि ने अपने विश्वविख्यात ग्रन्थ कामसूत्र की रचना ईसा की तृतीय शताब्दी के मध्य में की होगी। तदनुसार विगत सत्रह शताब्दियों से कामसूत्र का वर्चस्व समस्त संसार में छाया रहा है और आज भी कायम है। संसार की हर भाषा में इस ग्रन्थ का अनुवाद हो चुका है। इसके अनेक भाष्य एवं संस्करण भी प्रकाशित हो चुके हैं। वैसे इस ग्रन्थ के जयमंगला भाष्य को ही प्रमाणिक माना गया है। कोई दो सौ वर्ष पूर्व प्रसिद्ध भाषाविद सर रिचर्ड एफ़ बर्टन (Sir Richard F. Burton) ने जब ब्रिटेन में इसका अंग्रेजी अनुवाद करवाया तो चारों ओर तहलका मच गया। अरब के विख्यात कामशास्त्र 'सुगन्धित बाग' पर भी इस ग्रन्थ की अमिट छाप है।

महर्षि के कामसूत्र ने न केवल दाम्पत्य जीवन का श्रृंगार किया है वरन कला, शिल्पकला एवं साहित्य को भी संपदित किया है। राजस्थान की दुर्लभ यौन चित्रकारी तथा खाजुराहो, कोणार्क आदि की जीवन्त शिल्पकला भी कामसूत्र से अनुप्राणित है। रीतिकालीन कवियों ने कामसूत्र की मननोहारी झांकियां प्रस्तुत की हैं तो गीत गोविन्द के गायक जयदेव ने अपनी लघु पुस्तिका 'रति-मंजरी' में कामसूत्र का सार संक्षेप प्रस्तुत कर अपने काव्य कौशल का अद्भुत परिचय दिया है।

#### काम की व्याख्या

ग्रंथ में काम की व्याख्या द्वि-आयामी है। प्रथम सामान्य एवं द्वितीय विशेष। सामान्य के अन्तर्गत पंचेन्द्रियों द्वारा प्राप्त होने वाले आनन्द एवं रोमांच का समावेश किया गया है जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध मन एवं चेतना से जुड़ा हुआ है। इन्हीं के द्वारा मनोशारीरिक क्रिया एवं प्रतिक्रिया का संचालन होता है। विशेष के अन्तर्गत स्पर्शेन्द्रियों की भूमिका प्रतिपादित की गई है। शिश्न और योनि अत्यन्त संवेदनशील स्पर्शेन्द्रियां हैं। इन्हीं का पारस्परिक मिलन एवं घर्षण सम्भोग है जिसकी अन्तिम परिणति चरमोत्कर्ष (Climax) एवं स्खलन (Ejaculation) में होती है।

#### दाम्पत्य

कामसूत्र ने दाम्पत्य उल्लास एवं संतुष्टि के लिए यौन-क्रीड़ा को आधार माना है। दाम्पत्य जीवन में उल्लास एवं उमंग का संचार तभी होता है जब पति पत्नी दोनों में मानसिक तालमेल हो, दोनों एक दूसरे के परिपूरक बनने का प्रयास करें तथा यौन क्रीड़ा के समय पारस्परिक सहयोग करें और अपने अपने लक्ष्य की ओर आत्मविश्वास के साथ

निरन्तर आगे बढ़ते रहें। दाम्पत्य जीवन में सतत रसवर्षा के लिए ही महर्षि ने अपने कामसूत्र में यौन प्रेम के रहस्यों का उद्घाटन किया है एवं यौन क्रीड़ा तथा तकनीक का सूक्ष्म तथा विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया है।

काम एक अत्यन्त शक्तिशाली मूल प्रवृत्ति (Instinct) है। काम ही जीवन का संपदन, जीवन का उद्गम, उसके अस्तित्व तथा उसकी गतिशीलता तथा नर-नारी के पारस्परिक अकर्षण एवं सम्मोहन का रहस्य है। वास्तव में काम ही विवाह एवं दाम्पत्य सुख-शांति की आधारशिला है। काम का सम्मोहन ही नर-नारी को वैवाहिक-सूत्र में आबद्ध करता है। अतः विवाहित जीवन में आनन्द की निरन्तर रस-वर्षा करते रहना ही कामसूत्र का वास्तविक उद्देश्य है।

काम-विषयक अन्य प्राचीन ग्रन्थ

पंचशक्य

स्मरप्रदीप

रतिमंजरी

रसमंजरी

अनंग रंग

अब भी ज़्यादातर भारतीयों का मानना है कि सेक्स ज्ञान के लिए दूसरी शताब्दी में वात्स्यायन द्वारा लिखी गई 'कामसूत्र' से बेहतर कोई किताब नहीं है। लेकिन कामसूत्र की प्रसिद्धि सिर्फ भारत तक ही नहीं है। दुनिया की कई भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया है और इसने लोगों तक सेक्स ज्ञान को परोसने में अहम रोल प्ले किया है। कामसूत्र महर्षि वात्स्यायन द्वारा लिखा गया भारत का एक प्राचीन कामशास्त्र ग्रंथ है। दुनिया भर में यौन बिमारीयों और एड्स के बढ़ते चलन के कारण इस प्राचीन पुस्तक पर लोगों का खूब ध्यान गया है। खास कर पश्चिम के देशों में यह काफी लोकप्रिय हुआ है और इसमें लोगों की उत्सुकता बढ़ी है। कामसूत्र को उसके विभिन्न आसनों के लिए ही जाना जाता है

## भाग 1 साधारणम्

*वात्स्यायन के कामसूत्र के भाग 1 'साधारणम्' में कुल पाँच अध्याय हैं।*

*अध्याय 1 शास्त्रसंग्रहः*

*अध्याय 2 त्रिवर्गप्रतिपत्तिः*

*अध्याय 3 विद्यासमुद्देशः*

*अध्याय 4 नागरकवृत्तम्*

*अध्याय 5 नायकसहायदूतीकर्मविमर्शः*

## अध्याय १ शास्त्रसंग्रह

श्लोक (1)- धर्मार्थकामेभ्यो नमः॥

अर्थ- मैं धर्म, अर्थ और काम को नमस्कार करने के बाद मैं इस ग्रंथ की शुरुआत करता हूँ। भारतीय सभ्यता, संस्कृति और साहित्य का यह बहुत पुराना चलन रहा है कि ग्रंथ की शुरुआत, बीच और अंत में मंगलाचरण किया जाता है। इसके बाद आचार्य वात्स्यायन ने ग्रंथ की शुरुआत करते हुए अर्थ, धर्म और काम की वंदना की है। दिए गए पहले सूत्र में किसी देवी या देवता की वंदना मंगलाचरण द्वारा न करके, ग्रंथ में प्रतिपाद्य विषय- धर्म, अर्थ और काम की वंदना को महत्व दिया है। इसको साफ करते हुए आचार्य वात्स्यायन ने खुद कहा है कि काम, धर्म और अर्थ तीनों ही विषय अलग-अलग हैं फिर भी आपस में जुड़े हुए हैं। भगवान शिव सारे तत्वों को जानने वाले हैं। वह प्रणाम करने योग्य है। उनको प्रणाम करके ही मंगलाचरण की श्रेष्ठता पाई जा सकती है।

जिस प्रकार से चार वर्ण (जाति) ब्राह्मण, शुद्र, क्षत्रिय और वेश्य होते हैं उसी प्रकार से चार आश्रम भी होते हैं- धर्म, अर्थ, मोक्ष और काम। धर्म सबके लिए इसलिए जरूरी होता है क्योंकि इसके बगैर मोक्ष की प्राप्ति संभव नहीं है। अर्थ इसलिए जरूरी होता है क्योंकि अर्थोपार्जन के बिना जीवन नहीं चल सकता है। दूसरे जीव प्रकृति पर निर्भर रहकर प्राकृतिक रूप से अपना जीवन चला सकते हैं लेकिन मनुष्य ऐसा नहीं कर सकता है क्योंकि वह दूसरे जीवों से बुद्धिमान होता है। वह सामाजिक प्राणी है और समाज के नियमों में बंधकर चलता है और चलना पसंद करता है। समाज के नियम हैं कि मनुष्य गृहस्थ जीवन में प्रवेश करता है तो सामाजिक, धार्मिक नियमों में बंधा होना जरूरी समझता है और जब वह सामाजिक-धार्मिक नियमों में बंधा होता है तो उसे काम-विषयक ज्ञान को भी नियमबद्ध रूप से अपनाना जरूरी हो जाता है। यही कारण है कि मनुष्य किसी खास मौसम में ही संभोग का सुख नहीं भोगता बल्कि हर दिन वह इस क्रिया का आनंद उठाना चाहता है।

इसी ध्येय को सामने रखते हुए आचार्य वात्स्यायन ने काम के सूत्रों की रचना की है। इन सूत्रों में काम के नियम बताए गए हैं। इन नियमों का पालन करके मनुष्य संभोग सुख को और भी ज्यादा लंबे समय तक चलने वाला और आनंदमय बना सकता है।

आचार्य वात्स्यायन ने कामसूत्र की शुरुआत करते हुए पहले ही सूत्र में धर्म को महत्व दिया है तथा धर्म, अर्थ और काम को नमस्कार किया है।

श्लोक (2)- शास्त्रो प्रकृतत्वात्॥

अर्थ- आचार्य वात्स्यायन ने काम के इस शास्त्र में मुख्य रूप से धर्म, अर्थ और काम को महत्व दिया है और इन्हें नमस्कार किया है। भारतीय सभ्यता की आधारशिला 4 वर्ग होते हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। मनुष्य की सारी इच्छाएं इन्हीं चारों के अंदर मौजूद होती हैं। मनुष्य के शरीर में जरूरतों को चाहने वाले जो अंग हो यह चारों पदार्थ उनकी पूर्ति किया करते हैं।

इसके अंतर्गत शरीर, बुद्धि, मन और आत्मा यह 4 अंग सारी जरूरतों और इच्छाओं के चाहने वाले होते हैं। इनकी पूर्ति धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष द्वारा होती है। शरीर के विकास और पोषण के लिए अर्थ की जरूरत होती है। शरीर के पोषण के बाद उसका झुकाव संभोग की ओर होता है। बुद्धि के लिए धर्म ज्ञान देता है। अच्छाई और बुराई का ज्ञान

देने के साथ-साथ उसे सही रास्ता देता है। सदमार्ग से आत्मा को शांति मिलती है। आत्मा की शांति से मनुष्य मोक्ष के रास्ते की ओर बढ़ने का प्रयास करता है। यह नियम हर काल में एक ही जैसे रहे हैं और ऐसे ही रहेंगे। आदि मानव के युग में भी शरीर के लिए अर्थ का महत्व था। जंगलों में रहने वाले कंद-मूल और फल-फूल के रूप में भोजन और शिकार की जरूरत पड़ती थी। संयुक्त परिवार कबीले के रूप में होने के कारण उनकी संभोग संबंधित विषय की पूर्ति बहुत ही आसानी से हो जाती थी। मृत्यु के बाद शरीर को जलाया या दफनाया इसीलिए जाता था ताकि मरे हुए मनुष्य को मुक्ति मिल सके। इस प्रकार अगर भोजन न किया जाए तो शरीर बेजान सा हो जाता है। काम (संभोग) के बिना मन कुंठित सा हो जाता है। अगर मन में कुंठा होती है तो वह धर्म पर असर डालती है और कुंठित मन मोक्ष के द्वार नहीं खोल सकता। इस प्रकार से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष एक-दूसरे से पूरी तरह जुड़े हुए हैं। बिना धर्म के बुद्धि खराब हो जाती है और बिना मोक्ष की इच्छा किए मनुष्य पतन के रास्ते पर चल पड़ता है।

बुद्धि के ज्ञान के कारण समवाय संबंध बना रहता है। जैसे ही ज्ञान की बढ़ोतरी होती है वैसे ही बुद्धि का विकास भी होता जाता है। अगर देखा जाए तो बुद्धि और ज्ञान एक ही पदार्थ के दो हिस्से हैं।

जिस तरह से बुद्धि और ज्ञान एक ही है उसी तरह धर्म और ज्ञान भी एक ही पदार्थ के दो भाग हैं क्योंकि ज्ञान के बढ़ने से धर्म की बढ़ोतरी होती है। धर्म के ज्ञान में जितना भाग मिलता है तथा ज्ञान के अंतर्गत धर्म का जितना भाग पाया जाता है उसी के मुताबिक बुद्धि में स्थिरता पैदा होती है।

बुद्धि का संबंध जिस तरह से धर्म से है उसी तरह शरीर का अर्थ से संबंध है, मन का काम से संबंध है और आत्मा का मोक्ष का संबंध है। इन्हीं अर्थ, धर्म, काम में मनुष्य के जीवन, रति, मान, ज्ञान, न्याय, स्वर्ग आदि की सारी इच्छाएं मौजूद रहती हैं। अर्थ यह है कि जीवन की इच्छा अर्थ में स्त्री, पुत्र आदि की, काम में यश, ज्ञान तथा न्याय की, धर्म और परलोक की इच्छा मोक्ष में समा जाती है।

इस प्रकार चारो पदार्थ एक-दूसरे के बिना बिना अधूरे से रह जाते हैं क्योंकि अर्थ- भोजन, कपड़ों के बगैर शरीर की कोई स्थिति नहीं हो सकती तथा न संभोग के बगैर शरीर ही पैदा हो सकता है। शरीर के बिना मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता तथा मोक्ष की प्राप्ति के बगैर अर्थ और काम को सहयोग तथा मदद नहीं प्राप्त हो सकती है। इस प्रकार से मोक्ष की दिल में सच्ची इच्छा रखकर ही काम और अर्थ का उपयोग करना चाहिए।

अगर कोई व्यक्ति मोक्ष की सच्ची इच्छा रखकर ही काम और अर्थ का उपयोग करता है तो वह व्यक्ति लालची और कामी माना जाता है। ऐसे व्यक्ति देश और समाज के दुश्मन होते हैं।

सिर्फ धर्म के द्वारा ही प्राप्त किए गए अर्थ और काम ही मोक्ष के सहायक माने जाते हैं। यह धर्म के विरुद्ध नहीं है। आर्य सभ्यता के मुताबिक धर्मपूर्वक अर्थ और काम को ग्रहण करके मोक्ष की प्राप्ति ही मनुष्य जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

आचार्य वात्स्यायन इस प्रकार कामसूत्र को शुरू करते हुए धर्म, अर्थ और काम की वंदना करते हैं। आचार्य वात्स्यायन का कामसूत्र वासनाओं को भड़काने के लिए नहीं है बल्कि जो लोग काम और मोक्ष को सहायक मानते हैं तथा धर्म के अनुसार स्त्री का उपभोग करते हैं, उन्हीं के लिए है। नीचे दिए गए सूत्र द्वारा आचार्य वात्स्यायन में यही बताने की कोशिश की है।

**श्लोक (3)- तत्समयावबोधकेभ्यश्चाचार्येभ्यः॥**

अर्थ- इसी वजह से धर्म, अर्थ और काम के मूल तत्व का बोध करने वाले आचार्यों को प्रणाम करता हूं। वह नमस्कार करने के काबिल है क्योंकि उन्होंने अपने समय के देशकाल को ध्यान में रखते हुए धर्म, अर्थ और काम तत्व की व्याख्या की है।

#### श्लोक (4)- तत्सम्बन्धात्॥

अर्थ- पुराने समय के आचार्यों ने सिद्धांत और व्यवहार रूप में यह साबित करके बताया है कि काम को मर्यादित करके उसको अर्थ और मोक्ष के मुताबिक बनाना सिर्फ धर्म के अधीन है। न रुकने वाले काम (उत्तेजना) को काबू में करके तथा मर्यादा में रहकर मोक्ष, अर्थ और काम के बीच सामंजस्य धर्म ही स्थापित कर सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि धर्म के मुताबिक जीवन बिताकर मनुष्य लोक और परलोक दोनों ही बना सकता है। वैशेषिक दर्शन में यतोऽभ्युदयानिः श्रेयससिद्धिः स धर्मः कहकर यह साफ कर दिया है कि धर्म वही होता है जिससे अर्थ, काम संबंधी इस संसार के सुख और मोक्ष संबंधी परलौकिक सुख की सिद्धि होती है। यहां अर्थ और काम से इतना ही मतलब है जितने से शरीर यात्रा और मन की संतुष्टि का गुजारा हो सके और अर्थ तथा काम में डूबे होने का भाव पैदा न हो।

इसी का समर्थन करते हुए मनु कहते हैं जो व्यक्ति अर्थ और काम में डूबा हुआ नहीं है उन्हीं लोगों के लिए धर्मज्ञान कहा गया है तथा इस धर्मज्ञान की जिज्ञासा रखने वालों के लिए वेद ही मार्गदर्शक है।

इस बात से साबित होता है कि वैशेषिक दर्शन के मत से अभ्युदय का अर्थ लोकनिर्वाह मात्र ही वेद अनुकूल धर्म होता है।

धर्म की मीमांसा करते हुए मीमांसा दर्शन ने कहा है कि वेद की आज्ञा ही धर्म है। वेद की शिक्षा ही हिन्दू सभ्यता की बुनियाद मानी जाती है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि संसार से इतना ही अर्थ और काम लिया जाए जिससे मोक्ष को सहायता मिल सके। इसी धर्म के लिए महाभारत के रचनाकार ने बड़े मार्मिक शब्दों में बताया है कि मैं अपने दोनों हाथों को उठाकर और चिल्ला-चिल्लाकर कहता हूं कि अर्थ और काम को धर्म के अनुसार ही ग्रहण करने में भलाई है। लेकिन इस बात को कोई नहीं मानता है।

वस्तुतः धर्म एक ऐसा नियम है जो लोक और परलोक के बीच में निकटता स्थापित करता है। जिसके जरिये से अर्थ, काम और मोक्ष सरलता से प्राप्त हो जाते हैं। पुराने आचार्यों द्वारा बताया गया यही धर्म के तत्व का बोध माना गया है।

धर्म की तरह अर्थ भी भारतीय सभ्यता का मूल है। मनुष्य जब तक अर्थमुक्त नहीं हो जाता तब तक उसको मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। जिस तरह आत्मा के लिए मोक्ष जरूरी होता है, मन के लिए काम की जरूरत होती है, बुद्धि के लिए धर्म की जरूरत होती है, उसी तरह शरीर के लिए अर्थ की जरूरत होती है।

इसलिए भारतीय विचारकों ने बहुत ही सावधानी से विवेचन किया है। मनु के मतानुसार सभी पवित्रताओं में अर्थ की पवित्रता को सबसे अच्छा माना गया है। मनु ने अर्थ संग्रह के लिए कहा है कि जिस व्यापार में जीवों को बिल्कुल भी दुख न पहुंचे या थोड़ा सा दुख पहुंचे उसी कार्य व्यापार से गुजारा करना चाहिए।

अपने शरीर को किसी तरह की परेशानी पहुंचाए बिना ध्यान-मनन उपायों द्वारा सिर्फ गुजारे के लिए अर्थ संग्रह करना चाहिए। जो भी परमात्मा ने दिया है उसी में संतोष कर लेना चाहिए। इसी प्रकार पूरी जिंदगी काम करते रहने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। इसके अलावा और कोई सा उपाय संभव नहीं है।



वेदों, उपनिषदों के अलावा आचार्यों ने अपने द्वारा रचित शास्त्रों में अर्थ से संबंधी जो भी ज्ञान बोध कराए हैं उनका सारांश यही निकलता है कि मुमुक्षु को संसार से उतने ही भोग्य पदार्थों को लेना चाहिए जितने के लेने से किसी भी प्राणी को दुख न पहुंचे।

धर्म और अर्थ की तरह काम को भी हिंदू सभ्यता का आधार माना गया है। धर्म और अर्थ की तरह इसको भी मोक्ष का ही सहायक माना जाता है। अगर काम को काबू तथा मर्यादित न किया जाए तो अर्थ कभी मर्यादित नहीं हो सकता तथा बिना अर्थ मर्यादा के मोक्ष प्राप्त नहीं होगा। इसी कारण से भारत के आचार्यों ने काम के बारे में बहुत ही गंभीरता से विचार किया है।

दुनिया के किसी भी ग्रंथ में आज तक अर्थशुद्धि के मूल आधार-काम-पर उतनी गंभीरता से नहीं सोचा गया है जितना कि भारतीय ग्रंथ में हुआ है।

भारतीय विचारकों ने काम और अर्थ को एक ही जानकर विचार किया है लेकिन भारतीय आचार्यों ने जिस तरह शरीर और मन को अलग रखकर विचार किया है उसी तरह शरीर से संबंधित अर्थ को और मन से संबंधित काम को एक-दूसरे से अलग मानकर विचार किया है।

काम एक महती मन की ताकत है। भौतिक कार्यों में प्रकट होकर यह ताकत अन्तःकरण की क्रियाओं द्वारा अभिव्यक्त होकर 2 भागों में बंट जाती है। यह ताकत कभी भौतिक शक्ति तथा कभी चैतन्य के रूप में प्रकट होती है। कहीं-कहीं तो वह छितराकर काम करती है तो कहीं संवरण रूप में काम करती है।

हर मनुष्य का जीवन चित की इन्हीं आंतरिक और बाह्य शक्तियों के ऐसे बिखराव तथा संघर्ष-स्थल बना रहता है। अणु-अणु परमाणु में मन की यह शक्ति समाई हुई है। इसका एक हिस्सा बाहर है तो एक अंदर। इसमें से एक हिस्सा तो व्यक्ति को प्रवृत्ति की तरफ ले जाता है और दूसरा निवृत्ति की तरफ।

मूल वासनाएं ही मन की असली प्रवृत्तियां कहलाती हैं। हर तरह की वासनाओं या मूल प्रवृत्तियों का वर्गीकरण किया जाए तो वितैषणा, दारैषणा और लोकेषणा इन तीनों हिस्सों में सभी वासनाओं अथवा मन की मूल प्रवृत्तियों का समावेश हो जाता है। धन, स्त्री, पुत्र और यश आदि की इच्छा के मूल में आनंद का उपयोग रहता है। इसी तरह की वासनाओं, इच्छाओं या प्रवृत्तियों का प्राण आनंद नहीं होता।

तैत्तिरीय उपनिषद का मानना है कि आनंद से ही भूतों की उत्पत्ति होती है, आनंद से ही उत्पन्न सारी वस्तु तथा जीव-समुदाय जीवित रहते हैं तथा आनंद में ही लीन होते हैं। आनंद ही सब कुछ है।

वृहदारण्यक उपनिषद के अंतर्गत आनंद का एकमात्र स्थान जननेन्द्रिय है। बाकी सभी चीजें आनंद के साधन हैं। वित्त, स्त्री और लोक सभी कुष आनंद को बढ़ाने की इच्छा रखते हैं।

स्वामी शंकराचार्य के मतानुसार अंतरात्मा पहली अकेली थी लेकिन कालांतर में वह विषयों को खोजने लगा जैसे मेरी स्त्री, पुत्र हो और उनके भरण-पोषण के लिए धन हो। उन्हीं के लिए व्यक्ति अपने प्राणों की परवाह न करते हुए बहुत सी परेशानियों को झेलकर काम करता है। वह उनसे बढ़कर और किसी चीज को सही नहीं मानता। यदि बताई गई चीजों में से कोई भी एक चीज उपलब्ध नहीं होती तो वह अपनी जिंदगी को बेकार समझता है।

जीवन की पूर्णता अथवा अपूर्णता, सफलता अथवा असफलता का मापक यंत्र आनंद को माना जाता है। विषयों से ताल्लुक रखने में मनुष्य को भरपूर आनंद मिलता है। इस प्रकार यह पूरी तरह से साबित हो चुका है कि उसके

इच्छित विषयों में से एक के भी समाप्त होने पर वह मनुष्य अपने आपका सर्वनाश कर देता है और उसकी उपलब्धि से वह अपने आपको यथार्थ समझता है।

शंकराचार्य ने ब्रह्मसूत्र के शांकर भाष्य के अंतर्गत इस बात को स्वीकार किया है। उन उदाहरणों के द्वारा यह निष्कर्ष निकलता है कि हर व्यक्ति जोड़े के द्वारा अपनी पूर्णता की इच्छा रखता है। सृष्टि की शुरुआत में जब ब्रह्म अकेले थे तो उनके मन में यही संकल्प पैदा हुआ कि एकोऽह बहु स्यात्! एक से बहुत सारे हो जाने की ख्वाहिश ही अपूर्णता से पैदा होने वाले अभाव को व्यक्त को करती है।

हर मनुष्य रति को तलाश करना चाहता है, उसे बढ़ाने की कोशिश करता है, अनेक होकर आनंद का उपभोग करना चाहता है।

अकेले में उसे आनंद प्राप्त नहीं होता, अकेले में किसी तरह का आनंद नहीं है इसलिए उसे दूसरे की जरूरत पड़ती है।

इसके द्वारा 3 बातें सिद्ध होती हैं कि एक तो यह कि दो भिन्नताओं के बीच के संबंध को काम कहते हैं। यह एक प्रवृत्ति है जो विषय और विषयी को एकात्मा बनाती है।

दूसरी बात यह है कि काम-प्रवृत्ति विषय और रमण की इच्छा आदि शक्ति है। वह अकेला था इसका उसे बोध था- पहले वे आत्मा से एक ही था। वह पुरुष विध था। उसने अपने अलावा और किसी को नहीं पाया। मैं हूँ इस तरह पहले उसने वाक्य कहा।

मैं हूँ का बोध होने पर भी वह खुश नहीं हुआ इसलिए दूसरे की इच्छा की- स द्वितीयमैच्छत- वह दूसरा विषय था। फिर विषय ने अनेक रूप धारण कर लिया - सोऽकामयत बहु स्यात्! प्रजायते इति- उसने चाहा कि मैं अनेक हो जाऊँ, मैं पैदा करूँ! तदैवात बहुस्थां प्रजायेय इति। उसने सोचा कि मैं अनेक हो जाऊँ मैं सृजन करूँ।

स ऐक्षत लोकान्नु सृजा इति। उसने सोचा कि मैं लोकों की सृष्टि करूँ। उसके चाहने और सोचने पर भी इसकी सभी क्रियाओं के मूल में सिर्फ काम-प्रवृत्ति है। उसे जैसे ही अहमस्मि- मैं हूँ का बोध हुआ वैसे ही वह डरा तथा एक मददगार की इच्छा करने लगा।

जब जीव अविद्याग्रस्त हुआ तो उसे अपने अस्तित्व का ज्ञान हुआ कि मैं हूँ। इसके बाद उसे अपनी पहले की स्थिति को जानने की इच्छा हुई जिससे उसके दिल में दूसरे का बोध हुआ। दूसरे के बारे में दिमाग में आते ही वह डर गया, उसे उस तरफ से विकर्षण हुआ और फिर विकर्षण से आकर्षण पैदा हुआ कि अकेले संभोग नहीं किया जा सकता इसलिए दिल में दूसरे की इच्छा पैदा हुई।

सबसे पहले जीव को दूसरे का बोध होता है उसके बाद डर पैदा होता है। डर तभी पैदा होता है जब भिन्नता उत्पन्न होती है। जिस जगह पर डर पैदा होता है वहां पर डर को दूर करने के लिए खोई हुई चीज की इच्छा पैदा होती है। दार्शनिक की दृष्टि में इसी प्रेम-भय, प्रवृत्ति-निवृत्ति, आकर्षण-विकर्षण, राग-द्वेष में अविद्या का स्वरूप स्थिर रहता है। पुराने समय से अनंत जीव-समुदाय इसी में फंसा हुआ है। इस तरह के सभी अज्ञान के मूल में दूसरे के प्रति आकर्षण और दूसरों को अपने से अलग ही जानना चाहिए।

इसलिए साबित होता है कि काम और आकर्षण की इच्छा ही विश्व वासना कहलाती है। अविद्या, आकर्षण आदि सभी वासनाओं के मूल में काम मौजूद है। इसी प्रकार से वेदों, पुराणों में भी कार्य को आदिदेव कहा गया है।

काम शुरुआत में पैदा हुआ। पितर, देवता या व्यक्ति उसकी बराबरी न कर सके।

शैव धर्म में पूरे संसार के मूल में शिव और शक्ति का संयोग माना जाता है।

यही नहीं शैव मत के अंतर्गत आध्यात्मिक पक्ष में आदि वासना पुरुष और प्रकृति के संबंध में प्रकाशित है तथा वही भौतिक पक्ष में स्त्री और पुरुष के संभोग में परिणत है।

पूरी दुनिया को शिव पुराण और शक्तिमान से पैदा हुआ शैव तथा शाक्त समझता है। पुरुष और स्त्री के द्वारा पैदा हुआ यह जगत स्त्री पुंसात्मक ही है। ब्रह्म शिव होता है तथा माया शिव होती है। पुरुष को परम ईशान माना जाता है और स्त्री को प्रकृति परमेश्वरी। जगत के सारे पुरुष परमेश्वर है और स्त्री परमेश्वरी है।

इन दोनों का मिथुनात्मक संबंध ही मूल वासना है तथा इसी को आकर्षण और काम कहा जाता है।

इसके अलावा शिवपुराण में 8 से लेकर 12 प्रकरण तक काम के विषय में जो बताया गया है उसमें काम को मैथुनाविषयक काम के अर्थ में ही प्रयोग किया गया है। उनके अनुसार यह मानना कितना सच है कि विश्वामित्र, सुखदेव, श्रृंगी जैसे ऋषि और श्रीराम जैसे साक्षात् ईश्वर के अवतार भी काम के जाल में फंसे हुए हैं।

शिव पुराण की धर्म संहिता और वात्सायन के कामसूत्र में लिखा है कि संकल्प के मूल में विषय आसक्ति ही बनी रहती है।

काम को मन का आधार माना जाता है जो बच्चे के कोमल हृदय में सबसे पहले संपदित होता है। इसको वही जान सकता है जो सच्चाई को देखने की इच्छा रखता है।

**श्लोक (5)- प्रजापतिर्हि प्रजाः सृष्ट्वा तासां स्थितिनिबन्धनं त्रिवर्गस्य साधनमध्यायानां शतसहस्रेणाग्रे प्रोवाच॥**

अर्थ- प्रजापति ने प्रजा को रचकर और उनके रोजाना कार्य धर्म, अर्थ और काम के साधन भूतशास्त्र का सबसे पहले 1 लाख श्लोकों में प्रवचन किया है।

भारतीय सिद्धान्त के मुताबिक जब तक द्वंद (अंदरूनी लड़ाई) है तब तक दुख भी रहेगा। इसलिए दुख को निकालकर फैंक देना चाहिए। भगवान शिव के समान दूसरा कोई नहीं है। इन तीनों विषयों की ज्वाला यहां पर नहीं है। मनुष्य का गम्य स्थान भारतीय दार्शनिकों ने इसे ही कहा है। भारतीय वागमय का निर्माण भी इसी को प्राप्त करने के लिए ही हुआ है। ब्रह्मविद्या के अंतर्गत यह सारी विद्याएं मौजूद हैं।

सारे देवताओं से पहले पूरे संसारे की रचना करने वाले प्रजापति ब्रह्मा की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा ने अपने सबसे बड़े पुत्र अथर्व के लिए ब्रह्मविद्या का निर्माण किया जो कि हर विद्या में सबसे बढ़कर है। इससे इस बात का साफ पता चल जाता है कि ब्रह्मविद्या के अंतर्गत कामशास्त्र को भी महत्व दिया गया है।

आचार्य वात्सायन के मतानुसार ब्रह्मा ने प्रजा को उनके जीवन को नियमित बनाने के लिए कामसूत्र के बारे में बताया था- जो कि सुसंगत और परंपरागत माना गया है। ब्रह्मा ने कामसूत्र को काम, अर्थ और धर्म का साधन मानकर इसकी रचना की है क्योंकि इन तीनों का आखिरी पड़ाव मोक्ष ही है और मनुष्य के जीवन का मकसद भी मोक्ष को प्राप्त करना ही है। इसलिए जब तक मोक्ष की असली परिभाषा को बहुत अच्छी तरह से समझा नहीं जाएगा तब तक इसको प्राप्त करना बहुत ही ज्यादा मुश्किल है।

ब्रह्मा के लिए कामशास्त्र का निर्माण करना इसलिए जरूरी है कि काम आदिदेव है, इसकी शक्ति अपार है। जब तक काम का नियमित साधन नहीं किया जाता तब तक मानव जीवन भी नियमित नहीं हो सकता और उसकी कठिन से कठिन तपस्या पर भी पानी फेर सकता है।



योगवशिष्ठ के मतानुसार- ब्राह्मणों को जीवनमुक्त, नारदतऋषि, इच्छा से रहित, बहुज्ञ तथा विरागी समझा जाता है। वह देखने में आकाश की तरह कोम, विशद और नित्य होते हैं, लेकिन फिर भी वह काम के वशीभूत किस प्रकार हो गए।

तीनों लोकों के जितने भी प्राणी हैं चाहे वह मनुष्य हो या देवता, उन सभी लोगों का शरीर स्वभाव से द्वायात्मक होता है। जब तक शरीर मौजूद है तब तक शरीर धर्म स्वभाव से ही जरूरी है। जो वासना प्राकृतिक होती है उसको निरोध के द्वारा नहीं दबाया जा सकता क्योंकि हर जीव प्रकृति के अनुसार ही चलता है तो फिर निग्रह का क्या काम।

प्रकृति यान्ति भूतानि निग्रहः कि करिष्यति।

इसी प्रकार मूलभूत प्रवृत्तियों का निरोध करना बेकार है। आचार्य वात्सयायन के मतानुसार मानव जीवन में कामसूत्र की सबसे ज्यादा जरूरत मानते हुए ही सबसे पहले ब्रह्मा जी ने कामसूत्र की रचना की थी। इसके साथ ही इस कथन के द्वारा ही ग्रंथ की प्रामाणिकता साबित हो जाती है।

**श्लोक (6)- तस्यैकदेशिकं मनुः स्वायम्भुवो धर्माधिकारिकं पृथक् चकार॥**

अर्थ- ब्रह्मा के द्वारा रचे गए 1 लाख अध्यायों के उस ग्रंथ के धर्म विषयक भाव को स्वयम्भू के पुत्र मनु ने अलग किया।

**श्लोक (7)- बृहस्पतिर्थाधिकारिकम्॥**

अर्थ- अर्थशास्त्र से संबंधित विभाग को बृहस्पति ने अलग करके अपने अर्थशास्त्र का निर्माण किया।

**श्लोक (8)- महादेवानुचरश्च नन्दी सहस्रेणाध्यायानां पृथक् कामसूत्रं प्रोवाच।**

अर्थ- इसके बाद उस शास्त्र में से 1000 अध्याय वाले कामसूत्र को महादेव के अनुचर नन्दी ने अलग कर दिया।

**श्लोक (9)- तदेव तु पञ्चभिरध्यायशतैरौद्दालकिः श्वेतकेतुः सञ्जिक्षेप॥**

अर्थ- उद्दालक के पुत्र श्वेतकेतु ने नन्दी के उस कामसूत्र को 500 अध्यायों में करके पूरा कर डाला।

**श्लोक (10)- तदेव तु पुनरध्यर्धेनाध्यायशतेन साधारण-साम्प्रयोगिककन्यासम्प्रयुक्तकभार्याधिकारिक-पारदारिक-वैशिकऔपनिषदिकैः सप्तभिरधिकरणैर्बाभ्रव्यः पाञ्चालञ्जक्षेप॥**

अर्थ- इसके बाद पाञ्चाल देश के बभ्रु के बेटे ने श्वेतकेतु के 500 अध्यायों वाले कामसूत्र को 100 अध्यायों में साधारण साम्प्रयोगिक, कन्या सम्प्रयुक्त, भार्याधिकारिक, पारदारिक, वैशिक और औपनिषदिक नाम के 7 अधिकरणों में जोड़कर पेश किया।

मानव जीवन के मकसद को निर्धारित करने के लिए और उसे काबू करने के लिए ब्रह्मा ने एक संविधान बनाया जिसके अंदर लगभग 1 लाख अध्याय थे। इन अध्यायों में जीवन के हर पहलू का विशद, संयमन और निरूपण

का उल्लेख था। मनु ने उस विशाल ग्रंथ को मथकर आचारशास्त्र का एक अलग संस्करण पेश किया जो मनुस्मृति या धर्मशास्त्र के नाम से प्रचलित है।

मनु ने जो मनुस्मृति रची थी वह असली रूप में उपलब्ध नहीं है। प्रचलित स्मृति उसी स्मृति का संक्षिप्त विवरण है जिसे मनु ने पेश किया था। आचार्य बृहस्पति ने भी उसी विशाल ग्रंथ के द्वारा अर्थशास्त्र विषयक भाग अलग करके बार्हस्पत्यम अर्थशास्त्र की रचना की। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में बृहस्पति के अर्थशास्त्र के अंतर्गत ही देखने को मिलते हैं।

ब्रह्मा से लेकर बाभ्रव्य तक की कामशास्त्र की रचना पर विहंगम दृष्टि डालने से ग्रंथ रचना पद्धति की परंपरा और उसके इतिवृत्त का भी बोध होता है। कामशास्त्र को ब्रह्मा ने नहीं रचा उन्होंने तो सिर्फ इसके बारे में बताया है। इससे यह बात साबित हो जाती है कि रचनाकाल से ही कामसूत्र का प्रवचन काल शुरू होता है।

कामसूत्र के छठे और सातवें अध्याय से पता चल जाता है कि ब्रह्मा के प्रवचन शास्त्र से पहले मनु ने मानवधर्म को अलग किया, उसके बाद बृहस्पति ने अर्थशास्त्र को अलग किया, इसके बाद फिर नन्दी ने इसको अलग किया।

इसके बाद अर्थशास्त्र और मनुस्मृति की रचना हुई क्योंकि बृहस्पति और मनु ने कामसूत्र की रचना नहीं की बल्कि इसे सिर्फ अलग किया है। इसके बाद ही श्वेतकेतु और नन्दी ने इसके 1000 अध्यायों को छोटा करके 500 अध्यायों का बना दिया। इस बात से साफ जाहिर हो जाता है कि ब्रह्मा द्वारा रचित शास्त्र में से नन्दी ने कामविषयक सूत्रों को एक सहस्र अध्यायों में बांट दिया। उसने अपनी ओर से इसमें कुछ भी बदलाव नहीं किया क्योंकि वह प्रवचन काल था।

उसने जो कुछ भी पढ़ा या सुना था वह ऐसे ही शिष्यों और जानने वालों को बताया। लेकिन श्वेतकेतु के काल में संक्षिप्तीकरण का प्रचलन हो चुका था और बाभ्रव्य के काल में तो ग्रंथ-प्रणयन और संपादन की एक मजबूत प्रणाली प्रचलित हो गयी। पांचाल द्वारा तैयार किए गए 7 अधिकरण इस प्रकार हैं-

- साधारण अधिकरण
- साम्प्रयोगिक अधिकरण
- कन्या सम्प्रयुक्तक अधिकरण
- भार्याधिकारिक अधिकरण
- पारदरिक अधिकरण
- वैशिक अधिकरण
- औपनिषदिक अधिकरण

**श्लोक (11)- तस्यं षष्ठं वैशिकमधिकरणं पाटलिपुत्रिकाणां गणिकानां नियोगाद् दत्तक पृथक् चकार॥**

अर्थ- आचार्य दत्तक ने बाभ्रव्य द्वारा संक्षिप्त किए गए कामसूत्र के छठे भाग वैशिक नामक अधिकरण को अलग कर दिया। उन्होंने यह सब पाटलिपुत्र की गणिकाओं द्वारा अनुरोध करने पर ही किया था।

**श्लोक (12)- तत्प्रसंगात् चारायणः साधारणमधिकरणं पृथक् प्रोवाच। सुवर्णनाभः साम्प्रयोगिकम्। घोटकमुखः कन्यासम्प्रयुक्तकम्। गोनर्दीयो भार्याधिकारिकम्। गोणिकापुत्रः पारदारिकम्। कुचुमार औपनिषदिकमिति॥**

अर्थ- आचार्य चारायण ने इसी प्रसंग से साधारण नाम के अधिकरण का पृथक् प्रवचन किया। साम्प्रयोगिक नाम के अधिकरण को आचार्य सुवर्णनाभ ने अलग किया। कन्यासम्प्रयुक्तक नाम के अधिकरण को आचार्य घोटकमुख ने अलग किया। आचार्य गोनर्दीय ने भार्याधिकारिक नाम के अधिकरण को अलग किया। पारदारिक नाम के अधिकरण को गोणिकापुत्र ने कामसूत्र से अलग किया और औपनिषदिक नाम के अधिकरण को आचार्य कुचुमार ने अलग किया।

**श्लोक (13)- तत्र दत्तकादिभिः प्रणीतानां शास्त्रावयवानामेकदेशत्वात् महदिति च बाभ्रवीयस्य दुरध्येयत्वात् संक्षिप्य सर्वमर्थमल्पेन ग्रंथेन कामसूत्रमिदं प्रणीतम्।**

अर्थ- दत्तक आदि आचार्यों ने विभिन्न प्रकार के अधिकरणों को लेकर अपने-अपने ग्रंथों की रचना की। इस प्रकार ये खंड समग्र शास्त्र के ही भाग माने जाते हैं और आचार्य बाभ्रव्य का मूल ग्रंथ विशाल होने की वजह से साधारण मनुष्यों के लिए दुरध्येय है। इसलिए उस महान ग्रंथ को वात्स्यायन ने संक्षिप्त करके थोड़े ही में सारे विषयों से संपन्न कामसूत्र की रचना की।

मानव जाति की तरक्की और उसकी परंपरा को बनाए रखने के लिए ब्रह्मा ने काम, अर्थ और धर्म तीनों पुरुषार्थों को प्राप्त करने के लिए 100 अध्यायों में उपदेश दिए हैं। उस प्रवचन में से धर्माधिकारिक भागों को लेकर मनु ने मनुस्मृति की रचना की। बृहस्पति ने अर्थपूरक विषयों को लेकर अर्थशास्त्र की स्वतंत्र रचना की। फिर उसी प्रवचन में से काम के विषय के भागों को लेकर नन्दी ने एक सहस्र अध्यायों में कामसूत्र की रचना की।

ब्रह्मा से लेकर नन्दी तक की परंपरा को देखकर यह पता चलता है कि कामसूत्र ब्रह्मा द्वारा सृष्टि की रचना करने से पहले भी था। सृष्टि की रचना के बाद उन्नति और मानवी परंपरा को बनाए रखने के लिए ब्रह्मा ने कामसूत्र का भी उपदेश दिया जो धर्म और अर्थ से संबंधित था। उस विशाल प्रवचन के आधार पर ही नन्दी ने सहस्र अध्यायों के एक स्वतंत्र कामशास्त्र की रचना की अर्थात् कामसूत्र के प्रवर्तक नन्दी हैं।

आचार्य वात्स्यायन ने कामसूत्र ग्रंथ की शुरुआत में ही दावा किया था कि इसमें सभी प्रयोजनों का सम्यक् समावेश किया गया है।

**श्लोक (14)- तस्यायं प्रकरणधिकरणसमुद्देशः॥**

अर्थ- कामसूत्र के प्रकरण, अधिकरण और समावेश की सूची इस प्रकार है- अधिकार पूर्वक विषय जहां शुरु होगा उसे प्रकरण करते हैं जिसके प्रकरण होते हैं उसे अधिकरण कहते हैं तथा संक्षिप्त कथन को समुद्देश कहते हैं।

**श्लोक (15)- शास्त्रसंग्रहः। त्रिवर्गप्रतिपत्तिः। विद्यासमुद्देशः। नागरकवृत्तम्। नायकसहाय-दूतीकर्मविमर्शः। इति साधारणं प्रथमाधिकरणम् अध्यायाः पञ्च। प्रकरणानि पञ्च॥**

अर्थ- कामसूत्र का अनुबंधन अधिकरण अध्याय और प्रकरण के रूप में किया गया है। पहले अधिकरण का नाम साधारण इस कारण से रखा गया है कि इस अधिकरण में ग्रंथातर्गत- सामान्य विषयों का परिचय है, किसी सिद्धान्त की व्याख्या अथवा तात्त्विक विवेचन नहीं किया गया है।

पहला प्रकरण, पहला अध्याय- शास्त्र-संग्रह। यहां पर शास्त्र-संग्रह का अर्थ है इस शास्त्र की सूची। ग्रंथ लिखने से पहले लेखक एक विषय सूची तैयार करता है और उसी सूची के द्वारा ग्रंथ की रचना करता है। इसी प्रकार आचार्य वात्स्यायन ने अपने ग्रंथ की विषय सूची का नाम शास्त्र संग्रह रखा है अर्थात् वह संग्रह जिससे यह ग्रंथ शासित हुआ है।

दूसरा प्रकरण, दूसरा अध्याय- त्रिवर्ग प्रतिपाति। काम, धर्म और अर्थ यह 3 त्रिवर्ग कहलाए जाते हैं। त्रिवर्ग की प्राप्ति का नाम प्रतिपाति है। इस अध्याय और प्रकरण में यह भी बताया गया है कि धर्म, अर्थ और काम को किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।

तीसरा प्रकरण, तीसरा अध्याय- विद्यासमुद्देश। यहां पर सारी विद्याओं की नाम की सूची को विद्या समुद्देश का नाम दिया गया है। इस अध्याय का मुख्य मकसद है कि मानव को स्मृति, श्रुति, अर्थ विद्या और उसकी अंगभूत विद्या दंडनीति के अध्ययन के साथ कामसूत्र का अध्ययन जरूर करना चाहिए। यहां पर विद्याओं की नाम-सूची का अर्थ संभोग की 64 कलाओं से हैं।

चौथा प्रकरण चौथा अध्याय- नागरकवृत्त। नागरक से काम सूत्रकार का अर्थ विदग्ध अथवा रसिक व्यक्ति से होता है और वृत्त का अर्थ आचरण नहीं बल्कि दिनचर्या समझना चाहिए।

कामसूत्र के मुताबिक मनुष्य का सबसे पहले विद्या पढ़नी चाहिए, फिर अर्थोपार्जन करना चाहिए और इसके बाद विवाह करके गृहस्थ जीवन में प्रवेश करके नागरक वृत्त का आचरण करना चाहिए। कोई भी मनुष्य जब तक कामकलाओं की शिक्षा प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक उसको विवाह करने का कोई हक नहीं है। गृहस्थ जीवन को सही तरीके से चलाने के लिए अर्थ संग्रह जरूरी है। सुशिक्षित, धन-संपन्न मनुष्य ही अपने वैवाहिक जीवन को सही तरीके से चलाने में सक्षम हुआ करता है।

पांचवां प्रकरण, पांचवां अध्याय- नायक सहायद्वी- कर्म- विमर्श। आचार्य वात्स्यायन के मतानुसार विवाह से पहले वर्ण धर्म के मुताबिक स्त्री और पुरुष का चुनाव करके प्रेम संबंध स्थापित करना चाहिए। अगर इस तरह के प्रेम संबंधों को स्थापित करने में किसी तरह की रुकावट आती है तो मदद के लिए स्त्री या पुरुष को जरिया बनाना चाहिए। स्त्री-पुरुष किस तरह के संबंध स्थापित करें, किस तरह के व्यक्ति को अपना जरिया बनाएं, इस अध्याय के अंतर्गत इन्हीं बातों का उल्लेख किया गया है।

**श्लोक (16)- प्रमाणकालाभावेभ्यो रतावस्थापनम्। प्रीतिविशेषाः। आलिंगनविचाराः। चुम्बनविकल्पाः। नखरदनजातयः।**

**दशनच्छेदयविधयः। देश्याउपचाराः। संवेशनप्रकाराः। चित्ररतानि। प्रहणयोगाः। तदयुक्ताश्च। सीत्कृतोपक्रमाः।**

**पुरुषायितम्। पुरुषोपसृप्तानि। औपरिष्टकम्। रतारम्भावसानिकम्। रतविशेषाः। प्रणयकलहः। इति साम्प्रयोगिकं**

**द्वितीयमधिकरणम्। अध्याया दश। प्रकरणानि सप्तदश॥**

अर्थ- दूसरे अधिकरण में अध्यायों और प्रकरणों को इस प्रकार से बताया गया है-

•प्रमाण, भावों और काल के मुताबिक संभोग क्रिया की व्यवस्था करना।

•प्रतिभेद।

•आलिंगन।

•चुम्बन प्रकार।

- नखच्छेदन-प्रकार।
- दंतच्छेदन-प्रकार।
- अलग-अलग प्रदेशों के लोगों की अलग-अलग प्रवृत्तियां।
- संभोग के प्रकार।
- विचित्र प्रकार के विशिष्ट रत।
- मुट्ठी मारना।
- अलग-अलग स्ट्रोकों से पैदा हुई सी-सी करना।
- थकने के बाद पुरुष का स्त्री के समान व्यवहार करना।
- पुरुष का पास आना।
- औपरिष्टक (मुखमैथुन)।
- संभोग क्रिया की शुरुआत और आखिरी में कर्तव्य।
- उत्तेजना के प्रकार।
- प्रणय कलह।

इस अधिकरण के अंतर्गत यह 17 प्रकरण दिए गए हैं और 10 अध्याय हैं।

इस दूसरे अधिकरण का नाम साम्प्रयोगिक है। सम्प्रयोग से मतलब यहां संभोग से हैं। कामसूत्र का ग्रंथ होने की वजह से इस ग्रंथ में यह खासतौर से बताया गया है पुरुष अर्थ, धर्म और काम नामक तीनों वर्गों की प्राप्ति के लिए स्त्रियसाधयत अर्थात स्त्री को प्राप्त करें। आचार्य वात्स्यायन स्त्री को पाने का सबसे बड़ा लक्ष्य संभोग को ही मानते हैं। लेकिन जब तक संभोग क्रिया की पूरी जानकारी न हो तब तक इसमें पूरी तरह से कामयाबी मिलना मुश्किल है और न ही किसी तरह की आनंद की प्राप्ति होगी।

ऋग्वेद में संभोग के जिन 10 उपायों को बताया गया है वह कामसूत्र की उपर्युक्त संभोग क्रियाओं के अंतर्गत हैं। यह कोई खास विषय नहीं हैं। आध्यात्मिक नजरिये से भी जगदवैचिन्य मैथुनात्मक और कामात्मक है। काम का मुख्य भाग आकर्षण है या फिर आकर्षण का खास अंग काम है।

यही आकर्षण जब बड़ों के प्रति होता है, तब वह श्रद्धा, भक्ति आदि सम्मान के भावों में दिखाई पड़ता है, बराबर वालों के प्रति मित्रता, प्यार और सहयोगी के रूप में होता है, अपने से छोटों के प्रति दया और अनुकंपा आदि के रूप में प्रकट होता है और बच्चों के प्रति वात्सल्य भाव बनता है। वहीं काम मां के स्तनों में वात्सल्य के रूप में प्रेमी का आलिंगन करते समय कामरूप में और वही काम दीन-दुखियों के प्रति कृपा के रूप में अवतरिक होता है।

मगर इन सारे रूपों में एक ही मानसिक भाव प्रवाहित रहता है, वह होता है मिथुन का संबंध- काम या आकर्षण। इसी वजह से बृहदारण्यक उपनिषद में बताया गया है-



पुरुष काममय है। काम मन की जरूरत है।

**श्लोक (17)- वरणविधानम्। सम्बन्धनिर्णयः। कन्याविस्त्रम्भणम्। बालायाः। उपक्रमाः। इंगिताकारसूचनम्।  
एकपुरुषाभियोगः। प्रयोज्यस्योपावर्तनम्। अभियोगतश्च कन्यायाः। प्रतिपत्तिः विवाहयोगः। इति कन्यासम्प्रयुक्तकं  
तृतीयाधिकरणम्। अध्यायाः पञ्च। प्रकरणानि नव।।**

अर्थ- इसके बाद कन्या सम्प्रयुक्त नाम के तीसरे अधिकरण के प्रकरणों का निर्देश किया जा रहा है-

- कन्यावरण।
- विवाह करने के बारे में फैसला करना
- कन्या को भरोसा दिलाना।
- कन्या में प्यार पैदा करने का ढंग।
- इशारों आदि को समझना।
- इशारों, कोशिशों या किसी बहाने से देखी हुई कन्या से विवाह करने की कोशिश।
- कन्या द्वारा अपने चहेते को अपनी ओर आकर्षित करना।
- अपने प्रेमी को अभियोगों द्वारा प्राप्त करना।

इस अधिकरण के 9 प्रकरण सुखी दांपत्य जीवन की कुंजी माने गए हैं। कामसूत्र के रचयिता वात्स्यायन विवाह को धार्मिक बंधन मानते हुए दिल का मिलाप स्वीकार करता है। वह लड़कियों को न तो सिर्फ भेड़-बकरी जानकर मनचाहे खूंटों पर बांधने का समर्थन करता है और न ही उन्हें उच्छिखल और व्यभिचारिणी बनने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। इसलिए इसका विधान है कि लड़कियां और लड़के अपनी युवावस्था में पहुंचने पर संभोग की 64 कलाओं का अध्ययन करें तथा अपना जीवन साथी तलाश करने में अपने दिल और बुद्धि का ज्यादा से ज्यादा उपयोग करें।

इस बात की सच्चाई से इंकार नहीं किया जा सकता कि हर आदमी के अंदर ऐसे 2 तत्व रहते हैं जो एक-दूसरे से विशिष्ट हैं। इनमें से एक तर्कपूर्ण वृत्ति है और दूसरी विचारशून्य वृत्ति। यही वृत्ति अपने को काम-संभोग, भूख-प्यास और बहुत सी इच्छाओं के रूप में प्रकट करती है। दर्शनशास्त्र के अनुसार हर प्राणी समूह इच्छामात्र है। इच्छाओं के कारण ही मनुष्य का मन हर समय भटकता रहता है।

मनुष्य हर समय अपनी इच्छाओं को पूरी करने की कोशिश में लगा रहता है। इच्छाएं हमेशा पूरी होना चाहती हैं। हालात अनुकूल होने पर जब इच्छाएं पूरी नहीं होती तो वह मन में जमा होकर विक्षोभ उत्पन्न करती हैं। यह भी सच्चाई है किसी व्यक्ति को उसकी मनचाही चीज देश, काल, समाज या हालात के बंधन से अथवा राजदंड के डर से न मिलकर किसी दूसरे को मिल जाती है तो उसकी इच्छा क्रिया रूप में जमा हो जाती है और अगर वह इच्छाएं पूरी नहीं होती तो एक तूफान के रूप में मन में समा जाती है। जिसका नतीजा यह होता है कि उस व्यक्ति के मन और मस्तिष्क का संतुलन बिगड़ जाता है।

**श्लोक (18)- एकचारिणीवृत्तम्। प्रवासचर्या। सपत्नीषु ज्येष्ठावृत्तम्। कनिष्ठावृत्तम्। पुनर्भववृत्तम्। दुर्भगावृत्तम्।  
आन्तःपुरिकम्। पुरुषस्य बह्वीषु प्रतिपत्तिः। इति भार्याधिकारिकं चतुर्थमधिकरणम्। अध्यायौ द्वौ प्रकरणान्यष्टौ॥**

अर्थ- इस अधिकरण का नाम भार्याधिकारिक है। इसके अंतर्गत 8 प्रकरण और 2 अध्याय हैं-

- सिर्फ अपने पति पर ही अनुराग रखने वाली पत्नी का कर्तव्य।
- पति के कहीं दूर जाने पर पत्नी का कर्तव्य।
- सबसे बड़ी पत्नी का अपनी से छोटी सौतनों के साथ बर्ताव।
- सबसे छोटी पत्नी का अपनी से बड़ी सौतनों के साथ बर्ताव।
- दूसरी बार विवाहित विधवा का फर्ज।
- अभागिनी पत्नी का अपनी सौतनों और पति को खुश रखने का विधान।
- अंतःपुर (महलों में रहने वाले) के फर्ज।
- पति का अपनी बहुत सारी पत्नियों के प्रति कर्तव्य।

विवाह के बाद हर कन्या, कन्या न कहलाकर पत्नी कहलाती है। पत्नी और सप्तनी 2 प्रकार की भार्या होती है। इसके अंतर्गत इन दोनों प्रकार की पत्नियों के कर्तव्य दिए जा रहे हैं। गृहस्थ जीवन को सुख-संपन्न रूप से चलाने के नियमों को आचार्य वात्स्यायन अच्छी प्रकार जानते हैं। उसे इस बात की जानकारी भी है कि वह कौन सी एक छोटी सी चिंगारी है जो पूरे घर को जलाकर राख कर देती है। वह घर को सुखी बनाने के लिए मंगल कामना करता हुआ इस अधिकरण द्वारा सुझाव पेश करता है।

**श्लोक (19)- स्त्री-पुरुषशीलावस्थापनम्। व्यावर्तनकारणानि। स्त्रीषु सिद्धाः पुरुषाः। अयन्तसाध्या योषितः।  
परिचयकारणानि। अभियोगाः। भावपरीक्षा। दूतीकर्माणि। ईश्वरकामितम्। अंतःपुरिकं दाररक्षितकम्। इति पारदारिकं  
पञ्चममधिकरणम्। अध्यायाः षट् प्रकरणानि दश।**

अर्थ- पारदारिक नाम के पांचवें अधिकरण के प्रकरणों का निर्देश करते हैं। इसमें 6 अध्याय और 10 प्रकरण हैं।

- पुरुष और स्त्री के शील की व्यवस्थापना।
- पराए पुरुष के साथ संबंध बनाने में रुकावट डालने वाले कारण।
- स्त्रियों को अपने वश में करने में निपुण पुरुष।
- अपने आप ही वश में होने वाली स्त्रियां।
- परिचय प्राप्त करने के नियम।
- अभियोग।
- भावों की परीक्षा।

•दूतीकर्म।

•ऐश्वर्यशाली पुरुषों की इच्छाओं को पूरी करने के उपाय।

•व्यभिचारी पुरुषों से स्त्रियों की रक्षा।

इस अधिकरण का मुख्य मकसद किन हालातों में पराए पुरुष और पराई स्त्री का आपस में प्रेम संबंध पैदा होता है, बढ़ता है और टूट जाता है। किस तरह परदार इच्छा पूरी होती है और किस प्रकार व्यभिचारी से स्त्रियों की रक्षा की जा सकती है।

पुरुष और स्त्री के बीच एक ही शक्ति बहुत से रूपों में मौजूद रहती है जिसको प्रेम कहते हैं। अगर प्रेम का कहीं कोई बीज होता है तो वह सिर्फ संभोग की इच्छा ही है।

दार्शनिक दृष्टि से प्रेम का मुख्य मकसद संभोग को माना जाता है। जितने व्यवहार प्रेम से संबंध रखने वाले हैं वह सब संभोग-प्रेम में अंतर्हित हैं और इससे अलग नहीं किये जा सकते- जैसे आत्मप्रेम, मातृपितृ प्रेम, शिशु वात्सल्य, मैत्री, विश्व-प्रेम, विषय-वासनाओं से प्रेम और भावनाओं के प्रति श्रद्धा आदि।

मनुष्य जगत की हर वासना खासतौर पर वितैषणा, दारैषणा और लोकैषणा इन 3 भागों में बंटी है। अगर बारीकी से देखा जाए तो सारी वासनाएं सिर्फ दारैषणा में ही अंतर्भूत हो जाती हैं क्योंकि आकर्षण ही स्त्री की कामना का सार होता है और स्त्री-पुरुष के मिलन में आकर्षण ही परिणत हो जाया करता है।

धन, स्त्री और यश की इच्छा सिर्फ आनंद के लिए की जाती है। सारी तरह की वासनाओं की जड़ आनंद ही है और इसी को मूलप्रेरक शक्ति माना जाता है। इसका स्थूल अनुभव संभोग के द्वारा हासिल किया जा सकता है। सांसारिक जीवन में संभोग पराकाष्ठा का आनंद है इसलिए सभी तरह के आनंदों को संभोग आनंद का रूपांतर समझने में किसी तरह की आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

**श्लोक (20)- गम्यचिन्ता। गमनकारणानि। उपावर्तनविधिः। कान्तानुवर्तनम्। अर्थागमोपायाः। विरक्तिनिर्गानि। विरक्तप्रतिपत्तिः। निष्कासनप्रकाराः। विशीर्णप्रतिसंधानम्। लाभविशेषः। अर्थानर्थानुबन्धसंशयविचारः। वेश्याविशेषाश्च इति वैशिकं षष्ठमधिकरणम्। अध्यायाः षट्। प्रकरणानि द्वादश॥**

अर्थ- हम इस वैशिक नाम के छठे अधिकरण के प्रकरणों का निर्देश करते हैं। इस अधिकरण के अंतर्गत 6 अध्याय और 12 प्रकरण दिए गए हैं-

•गम्य पुरुष विचार।

•किसी एक व्यक्ति के साथ संभोग करने के कारण।

•अपनी तरफ आकर्षित करने का तरीका।

•वेश्या का अपने प्रेमी के साथ उसकी विवाहित पत्नी की तरह व्यवहार करना।

•अर्थोपार्जन के तरीके।

•विरक्त पुरुष के निशान।

•विरक्त पुरुष की दुबारा प्राप्ति।

- निकालने के उपाय।
- निकाले हुए के साथ दुबारा संधि करना।
- लाभ विशेष का विचार।
- अर्थ, धर्म और अधर्म के अनुबंध संयम संबंधी विचार।
- वेश्याओं के भेद।

इन 12 प्रकरणों से युक्त वैशिक नाम का यह छठा अधिकरण है। इस अधिकरण के अंतर्गत वेश्याओं के चरित्र और उनके समागम उपायों को बताया गया है। आचार्य वात्स्यायन नें वेश्यागमन को एक तरह का बुरा काम माना है और उनका कहना है कि वेश्यागमन से शरीर और अर्थ दोनों का नाश हो जाता है। लेकिन वेश्या समाज का ही अंग होती है इसलिए उसका उपयोग समाज करता है। साधारण मनुष्यों और वेश्याओं की भलाई को ध्यान में रखते हुए लेखक इस अधिकरण में वेश्याओं के चरित्र का विशद विवेचन किया है।

यह तो अनुभव की बात है कि काम एक शक्ति है और वह बहुत ज्यादा चंचल होती है। इस शक्ति का जब भी उन्नयन होता है तब तक भावों और संवेगों की उत्पत्ति होती है।

मनुष्य की जो इच्छाएं ग्रंथि का रूप ले लेती हैं वहीं वासना कही जाती है। वासनाओं के इसी वेग को संवेग कहते हैं। व्यक्ति के दिल में अनुकूल या प्रतिकूल वेदना ही उत्पत्ति ही भाव कहलाती है। यही भाव बढ़ते-बढ़ते संवेग का रूप धारण कर लेता है। विषयों की स्मृति से अथवा सत्ता से या फिर कल्पित विषयों से भी डर, प्रेम आदि के संवेग जागृत हुआ करते हैं। यह बात वाकई अनुभवसिद्ध है कि विषयों के सन्निकर्ष से कोई न कोई भाव अथवा संवेग जरूर पैदा होता है।

इसका समर्थन गीता में भी किया गया है कि संग से काम होता है। जितने भी वासना व्यूह हैं सभी के साथ संवेग जुड़ा रहता है। हमारी चित वृत्ति के भावमय, ज्ञानमय और क्रियामय- तीन ही रूप होते हैं। ज्ञान के कारण ही भाव और संवेग जागृत होते हैं। मनचक्र में सोई हुई अतुल कामशक्ति, प्रेरक स्फुलिंगों को पाकर ही जागृत होते हैं। बाह्य अथवा आभ्यंतर उद्दीपकों से पैदा संवेदनाएं और ज्ञानात्मक मनोभाव ही कामशक्ति के प्रेरक स्फुलिंग होते हैं। इनसे प्रेरणा पाकर ही संवेग के साथ कामशक्ति बहिर्मुख होती है।

मनुष्य के विचार चोटी पर होते हुए भी उसका हृदय हमेशा नई संवेदनाओं की तलाश में नीचे उतर आता है। हर मनुष्य को भावों को बदलने की इच्छा होती है। मनुष्य स्वभाव से ही बदलाव, सुंदरता और नएपन को चाहता है।

अगर गौर से देखा जाए तो नवीनता का दूसरा नाम अभिरुचि है। जहां पर नवीनता है वहीं रमणीयता रहती है।

रमणीयता का वही रूप है जो पल-पल में नएपन को प्राप्त करता है। संवेग के कारण ही हमारी क्रियाएं प्रतिक्षण बदला करती हैं। पहले तो उत्सुकता जागृत होती है और इसके बाद तृष्णा जागृत होती है। जिस समय व्यक्ति के दिल में संवेग पूरी तरह से जागृत हो जाता है उसी समय उसे 1 दिन 1 साल के जैसा लगता है।

जब संवेग के अवरोधक पूरी तरह अभिव्यक्ति नहीं होने देते तब मन में बेचैनी होने लगती है, चिंताएं बढ़ जाती हैं। मन में उथल-पुथल होने लगती है। सामाजिक नियमों के अनुरूप काम का निरोध-अवरोध तो जबरदस्ती

करना पड़ता है। जबकि यह अनुभव समाज युग-युग से करता आ रहा है कि काम वासना पर पूरी तरह से काबू नहीं पाया जा सकता। समाज का नियंत्रण यहीं तक सीमित रहता है कि वासना शारीरिक क्रिया में परिणत न होने पाए। मानसिक दृवन्द्व भले ही मजबूत होता है।

मनुष्य जिन वासनाओं को निरोध से दबाना चाहता है वह कभी नहीं दबती, बल्कि सुलगने लगती है और किसी न किसी रूप में अपना असर डालती रहती है। असल बात यह है कि जिस बात को मना किया जाता है उसी को करने के लिए मन में बेचैनी बढ़ती रहती है। शास्त्र और समाज की दृष्टि से पराई स्त्री के साथ संबंध बनाना अधर्म है और उसके साथ संभोग करने को गलत माना जाता है। इस तरह की रोक का नतीजा यह होता है कि पराई स्त्री का रस रसोत्तम माना जाता है।

**श्लोक (21)- सुभंगकरणम्। वशीकरणम्। वृष्याश्च योगाः। नष्टरागप्रत्यानयनम्। वृद्धिविधयः। चित्राश्च योगाः।  
इत्यौपनिषदिकं सप्तममधिकरणम्। अध्यायौ द्वौ। प्रकरणानि।**

अर्थ-

- गुण, रूप आदि को बढ़ाना।
- यंत्र, तंत्र और मंत्र द्वारा वश में करना।
- वाजीकरण (काम-शक्ति बढ़ाना) प्रयोग।
- नष्टराग (खत्म हुई उत्तेजना) को दुबारा पैदा करना।
- लिंग को बढ़ाने वाले प्रयोग।
- चित्र-विचित्र प्रयोग।

इन 6 प्रकरणों से युक्त औपनिषदिक नाम का यह सातवां अधिकरण है और इसके अंतर्गत 2 अध्याय हैं।

**श्लोक (22)- एवं षट्त्रिंशदध्यायाः। चतुःषष्टिः प्रकरणानि। अधिकरणानि सप्त। सपादं श्लोकसहस्रम्। इति शास्त्रस्य संग्रहः॥**

अर्थ- इस प्रकार से कामसूत्र में 36 अध्याय, 64 प्रकरण, 7 अधिकरण और 1250 श्लोक हैं।

**श्लोक (22)- संक्षेपमिमक्षुक्त्वास्य विस्तरोऽतः प्रवक्ष्यते। इष्टं हि विदुषां लोके समासव्यासभाषणम्॥**

अर्थ- इस तरह अधिकरण, अध्याय, प्रकरण आदि की विषय सूची संक्षेप में बताकर अब उसी को विस्तार से पेश किया जा रहा है क्योंकि संसार में विद्वानों के लिए संक्षेप तथा विस्तार दोनों की जरूरत है।

आचार्य वात्स्यायन ने इस सातवें अधिकरण के अंतर्गत अधिकरण का नाम औपनिषदिक रखा है। औपनिषदिक का स्थूल अर्थ टोटका होता है। इस अधिकरण के अंतर्गत कामवासना को पूरा करने के साधन तथा भौतिक जीवन की कामयाबी के तरीकों को बहुत ही विस्तार से समझाया जा रहा है।

तंत्र औषधि आदि के रूप में जो टोटके पेश किए जा रहे हैं, उनके अंतर्गत स्वेच्छाचारिता, उच्छृङ्खलात और असामाजिकता, अशिष्टता, निर्दयता की भावना न पैदा हो, यह विवेक भी रखा गया है।